'द्रुत झरो जगत के जीर्ण पत्र' सुमित्रानंदन पंत

प्रस्तुत कविता की रचना सन 1934 में हुई थी सन 1934 में हुई थी इस कविता में कवि पंत नहीं प्राचीन परंपराओं को झील पत्रों के समान तुरंत ही झड़ जाने को कहा है वास्तव में जो प्राचीन परंपराएं हैं समाज के लिए अनुपयोगी हो गई है उन्हें तुरंत अनंत में विलीन हो जाना चाहिए जिससे जीवन को हरियाली प्राणों की मरमर से मुखरित हो जाए और नवयुग की प्याली अमर प्रनर मदिरा में भर जाए कवि का आग्रह है कि नए युग से हमारे नए समाज का श्रृंगार हो और कवि का यह दृष्टिकोण उसकी प्रगति शीलता का परिचायक है।

1. "द्रुत झरो .....में हो विलीन।"

शब्दार्थ : द्रुत - शीघ्र। जीर्ण पत्र - पुराने पत्ते। अस्त-व्यस्त - नष्ट प्राय। शीर्ण - दुर्बल। मधुवात- वसंत की हवा। भीत - भयभीत। च्युत - पृथक।

कवि पंत का विश्वास है कि जब तक प्राचीन परंपराओं को त्यागा नहीं जाएगा तब तक नवयुग का उदय होना संभव नहीं है। और न हीं तब तक इच्छा नुकूल समाज-व्यवस्था का उद्भव होगा। अतः कवि यहां प्राचीन परंपराओं को जीर्ण-शीर्ण पत्रों के रूप में संबोधित करते हुए कहता है।

हे संसार के जीर्ण-शीर्ण नष्टप्राय और शुष्क पत्तों तुम शीघ्र ही झड़ जाओ। जिससे तुम्हारे स्थान पर नवीन कोमल पत्ते निकल आए। तुम सर्दी और गर्मी से प्रभावित होकर पीतवर्ण वाले हो गए हो। वसंत वायु से तुम भयभीत से लगते हो। कारण, वसंत ऋतु की हवा पुराने पीले पत्तों को झाड़ देती है, गिरा देती है। तुम वितराग हो अर्थात तुम्हारा अब किसी से संबंध नहीं रहा। अंतत: तुम जड़ और प्राचीन हो गए हो।

विगत युग निर्जीव और निर्जीव हो गया है। अब वह मरे हुए पक्षी के समान जान पड़ता है। यद्यपि अभी भी उसने संसार में अपना नीड़ निर्मित किया हुआ है। किंतु उसमें बोलने और सांस लेने की तनिक भी शक्ति नहीं रह गई है। यहां कवि ने मृत विहंग के माध्यम से प्राचीन परंपराओं की निर्जीवता को घोषित किया है। यद्यपि प्राचीन परंपराएं आज भी विश्व में अपना स्थान बराबर बनाए हुए हैं, किंतु अब प्रभावहीन रह गई है। अतः इन महत्वहीन परंपराओं को विदा देना औचित्यपूर्ण ही है। मृत पक्षी के पंख जिस भांति अस्त-व्यस्त होकर बिखर जाते हैं उसी भांति प्राचीन पत्तों! तुम भी इस अनंत विश्व में विलीन हो जाओ, अब तुम्हारी आवश्यकता नहीं है।

इन पंक्तियों में कवि का प्राचीन परंपराओं के प्रति विद्रोह व्यक्त हुआ है जो प्रगतिवाद की महती विशेषता है। यहां 'जीर्ण-पत्र, कवि ने सामाजिक रूढ़ियों और परंपराओं तथा 'मधुवात' नवीन विचारों के लिए प्रयुक्त किया है। अनुप्रास, पुनरुक्ति, तथा उपमा अलंकार की सुंदर योजना हुई है।

2. "कंकाल जाल .....युग की प्याली।" शब्दार्थ : कंकाल जाल - अस्थि पंजर, ठूँठ मात्र। नवज - नवीन। मुखरित - बोलते हुए। मांसल हरियाली- अत्यधिक हरी-भरी वस्तुएं। मंजरित- फला फूला, मंजरीयुक्त। पीक - कोयल। प्रणय - प्रेम। मदिरा- शराब।

प्रस्तुत अवतरण कवि ने विप्लव, क्रांति अथवा विनाश के पश्चात नवजीवन निर्माण की कामना व्यक्त की है। यहाँ कवि का आस्थावादी स्वर मुखरित हो गया है। कवि कहता है जिस प्रकार जेल में पुराने पत्तों के झड़ जाने के पश्चात उसके स्थान पर लाल-लाल कोपलें पूटती अंकुरित होती है। उसी प्रकार प्राचीन परंपराओं और रूढ़ियों के समाप्त होने पर जग के शरीर में जो अब केवल अस्थि पंजर मात्र रह गया है --नवल रुधिर का संचार होगा। और प्राणों की आनंदमई वाणी से जीवन में स्वस्थ हरियाली का आविर्भाव होगा। अर्थात जीवन में गतिशीलता और आनंद की अनुभूति होगी। इस प्रकार विकसित विश्व में जगह-जगह कोकिल के समान आनंदित होकर कूक उठेगा और अपने अमर प्रणय के स्वर की मदिरा से फिर नवयुग की प्याली को हर देगा। कवि का आशय यह है कि जब प्राचीन रूढ़िया और परंपराएं समाप्त हो जाएंगे तब नवीन युग का उदय होगा। उस समय सर्वत्र संसार नवीन आशाओं, नवीन आकांक्षाओं, नवीन सुख-श्री-सौरभ से पूर्ण हो जाएगा। इस प्रकार यह विश्व सभी प्रकार से सुंदर बन जाएगा। इन पंक्तियों में कवि ने मानव के विकास को प्राकृतिक विकास के माध्यम से दर्शाया है। कवि का यह वर्णन बड़ा ही काव्यमय एवं सजीव बन पड़ा है। जब रूढ़ियां जीर्ण-शीर्ण हो जाती है तो क्रांतिकारी विचार स्वयं ही उसका स्थान ले लेते हैं।